शोध अन्वयन
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
Vol. 9
Issue 1
15 January, 2018

डॉ. नगेन्द्र का हिन्दी आलोचना को अवदान

बीज शब्द :

*****

आनन्द कुमार (शोध छात्र)
डी.ए-वी. कॉलेज, कानपुर
E-mail: ananda25786@gmail.com

डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
डी.ए-वी. कॉलेज, कानपुर
E-mail: singhypdr@gmail.com

डॉ. नगेन्द्र का हिन्दी आलोचना को अवदान

आलोचना के क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने वाले साहित्यकार डॉ. नगेन्द्र आधुनिक युग के अत्यन्त उच्चकोटि के समीक्षक रहे हैं। अपने विचारों तथा भावों का प्रकाशन गद्य लेखन द्वारा व्यंजित करना आपका अभीष्ट रहा है। हिन्दी गद्य की लोकप्रियता में आपकी शैली मनोवैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित रही है। आप स्वच्छन्दता युग के रसवादी आचार्य हैं। उनकी व्यावहारिक आलोचना तथा सैद्धान्तिक आलोचना में एक सूत्रता दृष्टिगत की जा सकती है। आपने मनोवैज्ञानिक दृष्टि अपनाकर पाठक वर्ग की मन:स्थिति, समसामयिक युग की समीक्षा पद्धति को प्रभावकारी बनाया है। रामदरश मिश्र जी के अनुसार, 'डॉ. नगेन्द्र ने अपनी आलोचना यात्रा का आरम्भ किया समकालीन सर्जना के परीक्षण से किन्तु वे साथ ही साथ शास्त्र से भी जुड़ने गये। इसलिए उन्होंने समकालीन साहित्य चेतना को तो परखा ही, साथ ही साथ उसे पहले के साहित्य और साहित्य चिन्तन के संदर्भ में रखकर उन बुनियादी तत्वों को खोज में अपने को प्रवृत्त किया जो एक युग के साहित्य को दूसरे युग के साहित्य से, एक देश के साहित्य को दूसरे देश के साहित्य से जोड़ते हैं।

डॉ. नगेन्द्र की दृष्टि में साहित्यिक आलोचना भी ललित कला का अंग है। सामान्य सहृदय कृति का आस्वादन करता है तो आलोचक आस्वादन का विश्लेषण। इस प्रकार आलोचना की आत्मा कलामय बनती है तथा उसकी रचना प्रक्रिया- वैज्ञानिक।

डॉ. नगेन्द्र की व्यावहारिक आलोचना सम्बन्धी प्रथम रचना 'सुमित्रानन्दन पंत' है। तद्नुपरान्त इनके द्वारा अनेक पुस्तकें लिखी गई, जिनमें- 'साकेत : एक अध्ययन' 'कामायनी के अध्ययन की सीमाएँ', 'रीतिकाल और देव', 'देव और उनकी कविता', 'आधुनिक हिन्दी नाटक', 'आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ', 'प्रसाद और कामायनी', 'मैथिलीशरण गुप्त : पुनर्मूल्यांकन', 'राम की शक्तिपूजा' आदि उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त 'विचार और अनुभूति' नामक पुस्तक के अधिकांश निबन्ध भी व्यावहारिक समीक्षा से ही सम्बद्ध है।

डॉ. नगेन्द्र द्वारा लिखित 'सुमित्रान्दन पंत' में उनके श्रेष्ठ आलोचक रूप के दर्शन पाठकों को होते हैं जहाँ उनकी समीक्षा का आधार छायावादी युग की नई चेतना है, वही द्विवेदी युग की स्थूलता के प्रति उनका विद्रोह भी झलकता है। उन्होंने पंत के काव्य की व्याख्या का आधार पूर्णत: पन्त की कविता का लिया और उन कविता के अन्तर्गत प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर वे अपने निजी निष्कर्षों पर पहुँचे। यहाँ उनकी वैचारिक दृष्टि एवं कलात्मक दृष्टि का समन्वित विस्तार ही पंत की कविता में व्यावहारिक आलोचना का केन्द्रीय आधार रहा है। कृति की भूमिका में डॉ. रामकुमार वर्मा ने कहा है कि- 'केवल भाव जगत से निकली हैं- उनमें विवेक, ज्ञान, मनन तथा चिंतन भी अपेक्षित है।'

आपने यह स्वीकार किया है कि इस समीक्षा के अन्तर्गत भाव, ज्ञान, मनन तथा चिंतन इन सबका समन्वय भी है परन्तु योगेन्द्र प्रताप सिंह के अनुसार, 'पंत की इस समीक्षा को पढ़ने पर यह कहीं नहीं ज्ञात होता है कि उनकी समीक्षा का केन्द्रीय आधार वैचारिकता है।

लेखक ने पंत की छ: कृतियों- वीणा, पल्लव, ग्रन्थि, गुंजन, ज्योत्स्ना एवं युगान्त की समीक्षा हेतु पाँच आधारों को चुना है- 1. भावजगत, 2. विचार जगत, 3. कला जगल, 4. भाषण या 5. पंत पर वाह्य प्रभाव। वाह्य प्रभावान्तर्गत रवीन्द्र नाथ ठाकुर तथा अंग्रेजी काव्यधारा के रोमान्टिक कवियों की चर्चा की है। पंत की रचनाओं के योगदान को इंगित करते हुए वे कहते हैं कि-
'साहित्यिक जागृति का हिन्दी कविता में मंत्र फूँकने वाले है।' पंत की रचनाओं की तीन विशेषतायें हैं- 1. वस्तुगतता या कविता से कवि व्यक्तित्व की निर्लेपता की व्यंजकता तक ले आने का श्रेय पंत को हैं।
2. अपने सभी विचारों तथा अनुभवों को चिन्तन के ताप में गलाकर उससे ऐसा एकसार तथा तरल बना लेते हैं कि वे बिना प्रयास के भाषा में ढल उठते हैं। पंत जी भावुकता तथा कल्पना को कविता का केन्द्रीय आधार मानते है- किन्तु कोरी भावुकता उन्हें स्वीकार्य नहीं है। वे कल्पना दृष्टि, भाषिक, नवोन्मेष एवं पंत की वैचारिक पृष्ठभूमि का विवेचनात्मक परिचय देते हैं। पंत की काव्यभाषा की चित्रात्मकता की चर्चा डॉ. नगेन्द्र ने बार-बार की है। वे बड़ी सहृदयता से पंत जी की आलोचना करते हैं।

'यद्यपि उनका सुन्दर शिवं और सत्यं से शून्य है।'
इसी प्रकार अन्यत्र, 'पंत जी प्रधान रूप से कलाकार ही हैं। इनके काव्य में सबसे पहले कला का, उसके उपरांत विचारों का अंत में भावों का स्थान रहता है।'

एक स्थल पर उनका निष्कर्ष यह था कि- 'प्राणों का आवेग क्षीण होने के कारण पंत जी महान काव्य की सृष्टि करने में असमर्थ रहे हैं।'

एक नवीन काव्यभाषा के निर्माण में पंत जी के योगदान को उन्होंने महत्त्वपूर्ण मानते हुए दर्शाया है- 'पंत जी की भाषा हिन्दी के परिपूर्ण क्षणों की वाणी है। उसमें हिन्दी की समस्त

शक्तियों का विकास है।'

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने डॉ. नगेन्द्र की इस आलोचनात्मक कृति की चर्चा 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' के अन्तर्गत इस प्रकार की है- 'काव्य की छायावाद कही जाने वाली शाखा चले काफी दिन हुए। पर ऐसी कोई समीक्षा पुस्तक देखने में नहीं आई जिसमें उक्त शाखा की रचना क्रिया (टेकनिक) प्रसार की भिन्न-भिन्न भूमियाँ सोच-समझकर निर्दिष्ट की गई हैं। केवल प्रो. नगेन्द्र की 'सुमित्रानन्दन पंत' पुस्तक ही ठिकाने की मिली।'

इस चर्चा का डॉ. नगेन्द्र के लिये विशेष मूल्य था और इससे उनके आत्मविश्वास में निश्चय ही वृद्धि हुई थी, वे कह उठते हैं कि- 'जब शुक्ल जी ने अपने इतिहास में प्रमाण-पत्र के साथ मेरा नाम दर्ज कर लिया तो मुझे लगा, जैसे जनम के साथ ही मेरे आलोचक को अमरत्व का वरदान मिल गया हो। यह नशा निश्चय ही बड़ा गहरा था।'

आगे पंत के विकास के संदर्भ में आलोचक के चिंतन में भी परिवर्तन आए किन्तु यह समीक्षा उस देशकला के अनुक्रम में सर्वथा उपयुक्त है। धीरे-धीरे कविता के प्रति उनका झुकाव कम होने लगा और वे आलोचना का मार्ग प्रशस्त कर, आगे बढ़ चले। इस सम्बन्ध में उनका कथन दर्शनीय है- 'बाह्य जीवन के विषय में मेरा जो दृष्टिकोण और मूल्य बनते जा रहे थे, उनमें बुद्धितत्व की मात्रा बढ़ने लगी थी, अत: उनकी अभिव्यक्ति के लिए आलोचनात्मक गद्य का माध्यम अधिक सुगम और अनुकूल पड़ा।'

नगेन्द्र जी ने छायावाद को स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह माना है और प्रगतिवाद को छायावादी सूक्ष्मता के प्रति स्थूलता का विद्रोह कहते हैं, यथा- 'स्थूल ने एक बार फिर सूक्ष्म के विरुद्ध विद्रोह किया। यह प्रतिक्रिया दो रूपों में व्यक्त हुई। एक तो छायावाद की पलायन वृत्ति के विरुद्ध, उसकी अमूर्त उपासना के विरुद्ध। इन्हीं दोनों प्रवृत्तियों का सम्मिलित रूप आज प्रगतिवाद के नाम से पुकारा जाता है।'

उन्होंने 'आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ' नामक पुस्तक में प्रगतिवाद पर एक लेख स्वतन्त्र रूप से लिखा, लेख का कुछ अंश दर्शनीय किया जा सकता है,- 'प्रगति का साधारण अर्थ है- बढ़ना। जो साहित्य जीवन को आगे बढ़ाने में सहायक हो, वही प्रगतिशील साहित्य है। इस दृष्टि से विचार करेंगे तो तुलसीदास सबसे बड़े प्रगतिशील लेखक प्रमाणित होते हैं। भारतेन्दु बाबू और द्विवेदी युग के लेखक मुख्यत: मैथिलीशरण गुप्त जी इस अर्थ में प्रगतिशील लेखक हैं, परन्तु आज का प्रगतिवादी इनमें से किसी को भी प्रगतिशील नहीं मानेगा, ये सभी तो उसके मतानुसार प्रतिक्रियावादी लेखक हैं।'

डॉ. नगेन्द्र ने प्रगतिवादी विचारधारा पर आक्षेप लगाते हुए कहा- 'साहित्य अपने मूल रूप में सामाजिक या सामूहिक चेतना नहीं है, वह तो वैयक्तिक चेतना ही हो सकती है। मनुष्य पहले व्यक्ति है, पीछे समाज की इकाई और उसका पहला रूप ही मौलिक है। सबसे बड़ी आपत्ति प्रगतिवाद के मूल्यों से ही है, वह साहित्य और पैदावार का सीधा संबंध स्थापित करते हुये उसे रोटी-पानी या जीवन के लिए सामाजिक प्रश्नों को हल का सीधा साधन मानकर बहुत ही सस्ता बना देता है।... एक ओर आक्षेप, जो प्रगतिवाद के मूल सिद्धान्तों पर किया जा सकता है, यह है कि इसका दृष्टिकोण मूलत: वैज्ञानिक होने के कारण बौद्धिक एवं आलोचनात्मक है। अतएव स्वभाव से ही उसमें वह तन्मयता या आत्मविसर्जन नहीं है, जो काव्य के लिए अनिवार्य है।'

साकेत : एक अध्ययन भी डॉ. नगेन्द्र की व्यावहारिक आलोचनात्मक कृति है। जिसमें कृति का मूल लक्ष्य उसके प्रभाव व्यंजक संदर्भों की व्याख्या न होकर इस कृति का व्यवस्थित मूल्यांकन है। मैथिलीशरण गुप्त तथा साकेत पर अपना मन्तव्य प्रकट करते हुये, उन्होंने उद्घाटित किया है कि- 'मैथिलीशरण गुप्त आधुनिक हिन्दी काव्य के निर्माता थे और इस दृष्टि से उनका ऐतिहासिक महत्त्व अक्षुण्ण रहेगा। हिन्दी कविता में जिस आधुनिक देवता का आविर्भाव भारतेन्दु के साहित्य में हुआ था। उसका वास्तविक परिपाक गुप्त जी के ही काव्य में हुआ।'

वे आगे भी इंगित करते हैं- 'जिसने गुप्त जी के काव्यों को एक बार भी अध्ययन नहीं किया है, वह अवश्य ही मान लो कि उनको गृहस्थ जीवन के चित्र खींचने में अद्वितीय सफलता मिली है। यह युग राष्ट्रीयता का होने के कारण लोग उनकी राष्ट्रीयता को ले उड़े, अन्यथा उनकी प्रधान विशेषण गृहस्थ जीवन के सुख-दु:ख की व्यंजना ही है।'

साकेत के अन्तर्गत डॉ. नगेन्द्र सर्वप्रथम उसकी कथावस्तु का परीक्षण करते हैं। कथावस्तु का प्रारम्भ रामकथा के मूल संदर्भ से होना है किन्तु अष्टम् सर्ग के उपरान्त 'ऊर्मिला' प्रसंग अचानक आ जाता है। कहने का आशय है कि कथा राम को केन्द्र मानकर प्रारम्भ होती है किन्तु उसका समापन अंश 'उर्मिला' की कथा के प्राधान्य से जुड़कर 'लक्ष्मण और उर्मिला' की कथा रूप ले लेता है। नवें सर्ग से ही 'उर्मिला', 'साकेत' महाकाव्य के फलक पर छा जाती है। डॉ. नगेन्द्र कथा वस्तु की इस विसंगति को समझते हैं और अपना पक्ष चरित्र प्रधानता अर्थात् उपेक्षित नारी की ओर

कर देते हैं। वे 'नारी' के इसी पक्ष को महाकाव्यत्व के संदर्भों से जोड़कर देखने की चेष्टा करते हैं। 'साकेत' और 'रामचरित मानस' की तुलना करते हुये डॉ. नगेन्द्र कहते हैं कि- 'तुलसीदास विरोधियों के प्रति एकदम असहिष्णु हैं, परन्तु गुप्त जी को उनसे कोई बैर नहीं। साकेत भी कैकेयी, मेघनाद ओर रावण-तीनों इसके साक्षी है। मानव को मानव के रूप में समझना उस युग की विशेषता है। उसको 'साकेत' में जिस आग्रह के साथ ग्रहण किया गया है, उस आग्रह के साथ मानस में नहीं। साकेत स्वरूप से जीवन काव्य है-------- वह भारतीय जीवन का प्रतिनिधि काव्य है।'

गुप्त जी के अभिव्यंजना कौशल का वर्णन करते हुये उन्होंने 'प्रस्तुत' के स्थान पर प्रतीक का प्रयोग किया, प्रस्तुत वर्णन के पीछे अप्रस्तुत- चेतना-चित्र, लक्षणा-व्यंजना पर आश्रित वर्णन प्रणालियों और 'अप्रस्तुत द्वारा प्रस्तुत के आच्छादन' जैसी युक्तियों का उद्घाटन किया। इनमें से कुछ विशेषताओं की चर्चा छायावाद के संदर्भ में शुक्ल जी पूर्व में ही कर चुके थे। इस तरह उन्होंने (डॉ. नगेन्द्र) आचार्य शुक्ल की समीक्षा पद्धति का ही और विकास किया। यहाँ आलोचक की सर्जक के साथ जुड़ी आत्मीयता तथा सहानुभूति कृति के तटस्थ मूल्यांकन में कभी-कभी अवरोध खड़ा कर देती है- जिसका 'साकेत : एक अध्ययन में स्पष्ट रूप परिलक्षित होता है। संभवत: इसी तथ्य को ध्यान में रखकर पं. नन्ददुलारे बाजपेयी जी ने यह संकेत दिया है- 'साकेत : एक अध्ययन सही अर्थ में अध्ययन नहीं है।'

इस समीक्षा में प्रतिक्रियाएं ही थी, तर्क नहीं थे। 'साकेत : एक अध्ययन' कृति को लेकर कई अन्य समीक्षाएँ प्रकाशित हुई, जो एकमात्र इस समीक्षा को छोड़कर उसके पक्ष में ही रहीं।

'देव और कविता' डॉ. नगेन्द्र की व्यावहारिक समीक्षा सम्बन्धी सबसे प्रमुख पुस्तक है। 'लेखक ने बड़े गम्भीर अध्ययन और मनन के आधार पर देव के साहित्य का सर्वांगीण विवेचन किया है।'

कतिपय विद्वान समीक्षक उनकी इस कृति को व्यावहारिक आलोचना के अन्तर्गत रखना चाहते हैं, जो योगेन्द्र प्रताप सिंह जी की दृष्टि में उचित नहीं है। उनके कथनानुसार,'उनका डी.लिट. का शोध प्रबन्ध 'रीतिकाव्य की भूमिका देव और उनकी कविता' के नाम से स्वीकृत हुआ था- जिसे उन्होंने दो नामों से प्रकाशित कराया- रीतिकाव्य की भूमिका, सन् 1949 में देव और उनकी कविता से भिन्न काव्यशास्त्रीय ग्रंथ के रूप में प्रकाशित है और फिर दोनों साथ-साथ प्रकाशित हुए।... उनका उद्देश्य इन कृतियों का गहन व्यावहारिक समीक्षागत विश्लेषण न होकर उनकी लेखन कला और रचनात्मक विशेषताओं का परिचय देना मात्र है।'

'प्रसाद और कामायनी' पर अपने विचार प्रकट करते हुये डॉ. नगेन्द्र ने प्रसाद की बहुमुखी प्रतिभा का परिचय अपने शब्दों में कुछ यूँ कराया है- 'हिन्दी साहित्य से नवीन मन्वन्तर के प्रवर्तक जयशंकर प्रसाद का विश्व के कवियों में गौरवपूर्ण स्थान है। काव्यजगत में रवीन्द्रनाथ, दांते और मिल्टन के समकक्ष हैं। नाटक के क्षेत्र में रंगमंच के अभियंताओं के आरोपों के बावजूद उनका स्थान प्रथम श्रेणी के कलाकारों में पुरक्षित है। इनकी लघु कथाएं कहानी-कला के छोटे-छोटे ताजमहल है और उपन्यासों में अपने समय की सांस्कृतिक-सामाजिक समस्याओं का दार्शनिक-मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है; जो अत्यन्त दुर्लभ भी है। उनके ऐतिहासिक तथा काव्यशास्त्रीय निबंध अपने-अपने क्षेत्र में नए आयामों का उद्घाटन करते हैं।'

इसी प्रकार, 'कामायनी के अध्ययन की सीमाएँ' नामक आलोचनात्मक कृति स्थूलता के प्रति सूक्ष्मता के विद्रोही रूप का आंकलन प्रस्तुत करती है। जहाँ छायावादी मान्यताओं के आधार पर लिखी गई इस कृति के कृतित्व का विवेचन स्वयं में एक प्रश्न चिन्ह लगा देता है, क्योंकि उन्होंने आरम्भ ही इस वाक्य से किया कि 'काव्य का मूल प्रयोजन- रसास्वाद, कम से कम कामायनी तक तो यह स्थापना सर्वथा मान्य है ही, आगे की बात आगे देखेंगे।'

कृति का जिस समय प्रकाशन हुआ, उस समय कामायनी की समीक्षा हेतु 'रस-सिद्धान्त' उतना मान्य नहीं रह गया; जैसा डॉ. नगेन्द्र कहते हैं। इसके साथ ही कृतिकार ने जिस प्रकार रसास्वादन की व्याख्या की उससे भी रस की परम्परावादी शास्त्रीय अवधारण ा के समक्ष अनगिनत प्रश्न उभर आये। जहाँ डॉ. नगेन्द्र ने स्वयं रसास्वादन को समझाने के लिये आई.ए. रिचर्ड्स द्वारा निरूपित काव्यास्वादन की प्रक्रिया का सहारा लिया। वहीं कामायनी के महाकाव्यत्व को उन्होंने लोंजाइनस की उदात्त अवधारणा के सहारे प्रतिष्ठित किया।

शैली की विशेषताओं में भी, पाश्चात्य आलोचना में प्रचलित शब्दावली को अंगीकार किया। निर्मला जैन का यह कथन साधारणीकरण के संदर्भ में प्रस्तुत है- 'साधारणीकरण के लिए कवि ने रूपक की भावमय पद्धति ग्रहण की है साधारणीकरण की अवधारणा के बारे में प्रश्न खड़े करता है। उन्होंने कामायनी के विविध प्रसंगों में अनेक रसों की स्थिति भी दिखाई है और उसमें रूपक तत्त्व की व्याख्या पात्रों में कृतिकार्य बताते हुये की है।'

डॉ. नगेन्द्र द्वारा उठाई गयी समस्याएँ उनके पाँच निबन्धों की भाँति उनकी व्यावहारिक समीक्षा के संदर्भ में व्यवस्थित नहीं, बल्कि सूत्रात्मक एवं अक्रमबद्ध दिखायी देती है- 'उनकी प्रवृत्ति सैद्धान्तिक आरोपों से सम्बद्ध है आचार्य नगेन्द्र का शास्त्रीय व्यक्तित्व सर्जन की सामयिक एवं स्वच्छन्द सक्रिय गतिविधि को पूरी तरह दबोचे चलता है और एक क्षण के लिए भी इस कृति में कामायनीकार का स्वच्छन्द जीवन सक्रिय व्यक्तित्व मुक्त नहीं हो पाता।'

इसी प्रकार अन्यत्र स्थल पर डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी जी का यह कथन उल्लेखनीय है- 'नगेन्द्र कामायनी के अर्थ को पुराने काव्यशास्त्र के साथ नये विराम चिन्हों से बाँध देना चाहते हैं। इस मायने में उनकी व्याख्या सबसे अधिक रूढ़िवादी है।'

डॉ. नन्दकिशोर नवल ने डॉ. नगेन्द्र के समीक्षा कर्म पर असन्तोष व्यक्त करते हुये स्पष्ट किया कि- 'ऐसी स्थिति में कामायनी की रक्षा लोंजाइनस के तर्कों के सहारे नहीं की जा सकती।'

कामायनी में दार्शनिक पृष्ठभूमि का विवेचन करते हुये उन्होंने (डॉ. नगेन्द्र) उल्लेखित किया कि- 'दर्शन के लिए उलझे हुये सूत्रों में अनुस्यूत आनन्दवाद के मूलसूत्र को पकड़कर कामायनी की दार्शनिक गुत्थी को सुलझाया कामायनी के अध्ययन कम की अनिवार्य समस्या है।'

आगे भी उनका कहना है कि- 'ज्यों ही मैं कामायनी का मूल्यांकन करने के लिए प्रवृत्त होता हूँ- मुझे लोंजाइनस की यह उक्ति अनायास ही याद आती है।'

अन्ततः यहाँ यह कहा जा सकता है, कि डॉ. नगेन्द्र की शास्त्रीय समीक्षा का मापदण्ड इतना आवेगपूर्ण एवं उनके शास्त्रीय समीक्षक के व्यक्तित्व का अंग बनकर व्यावहारिक समीक्षा के समय रचना में व्याप्त सर्जनशीलता के सामयिक अनुभव को विस्तृत कर जाता है । लेकिन साथ ही उनके व्यक्तित्व में सैद्धान्तिक शास्त्रीय समीक्षा के तत्व पूर्ण रूपेण संयुक्त होकर उनकी व्यावहारिक आलोचना में जुड़ जाते हैं।

फ्रायड के सिद्धान्तों का डॉ. नगेन्द्र ने अपनी व्यावहारिक समीक्षा में बहुतायत प्रयोग किया है। वे स्पष्ट करते हैं कि- 'हिन्दी के लिए फ्रायड का अवचेतन विज्ञान वरदान सिद्ध हुआ।' सुमित्रानन्दन पंत, छायावाद, रीतिकाव्य की भूमिका आदि में फ्रायडीय प्रभाव डॉ. नगेन्द्र में जगह-जगह विद्यमान है।

सैद्धान्तिक आलोचना के क्षेत्र में डॉ. नगेन्द्र का सबसे महत्वपूर्ण योगदान 'रससिद्धान्त' है। 'रस-सिद्धान्त' भारतीय काव्यशास्त्र की आधारशिला है। डॉ. नगेन्द्र ने रस की परिभाषा, रस का स्वरूप, कारण, रस काव्यास्वाद, रस निष्पत्ति, रस का स्थान, साधारणीकरण भावों का विवेचन, रस भेद, रसों का परस्पर संबंध आदि विषमों का व्यापक एवं विस्तृत विवेचन किया है। उनकी मान्यता है कि- 'रस सिद्धान्त-प्रतिपादक प्राचीनतम ग्रंथ भरत का नाट्यशास्त्र ही है, पर भरत से पूर्व रस-सिद्धान्त का आर्विभाव हो चुका था क्योंकि भरत सूत्रों का रस-प्रतिपादन इतना सांगोपांग और पूर्ण है कि उसके पीछे एक विस्तृत विचार परम्परा की कल्पना अनिवार्य है। रस की व्याख्या करते हुये दर्शाते हैं- रस आस्वाद नहीं है आस्वाद्य है अर्थात् अनुभूति नहीं है अनुभूति का विषय है, नवीन शब्दावली में रस विषयीगत नहीं है, विषयगत है। उन्होंने भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र का व्यापक और गहन अध्ययन किया है। विभिन्न काव्य सिद्धान्तों के महत्त्व का अंकन करते हुये वे कहते हैं- 'शास्त्र रूढ़ियों से मुक्त रस सिद्धान्त, अपने व्यापक विकासशील रूप में काव्य का सार्वभौम सिद्धान्त है, जिसके आधार पर प्रत्येक देश और प्रत्येक काल के सृजनात्मक साहित्य का, सृजनात्मक साहित्य की प्रत्येक विधा का उचित मूल्यांकन किया जा सकता है। इसकी कल्पना इतनी सर्वांगीण है कि मानव-चेतना की मूल वृत्ति राग को धुरी बनाकर यह अन्य सभी प्रमुख तत्वों को उचित रूप में स्वीकार कर चलता है, अतः जीवन के समस्त रूपों तथा विविध मूल्यों के साथ रस-सिद्धान्त का पूर्ण सामंजस्य है, जिसमें विभिन्न वादों के अन्तर्विरोध समाहित हो जाते हैं। कारण, वास्तव में यह है कि रस-सिद्धान्त मानववाद के दृढ़ आधार पर प्रतिष्ठित है।'

मानववाद पर आधारित होने के कारण ही रस-सिद्धान्त को देश कालातीत सिद्धान्त के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। इसी पर जोर देते हुये डॉ. नगेन्द्र ने कहा- 'जीवन की भूमिका में जब तक मानवता से महन्तर सत्य का आविर्भाव नहीं होता और साहित्य की भूमिका में जब तक मानव संवेदना से अधिक रमणीय सत्य की उद्भावना नहीं होती, तब तक रस-सिद्धान्त से अधिक प्रमाणिक सिद्धान्त की कल्पना नहीं की जा सकती है।'

डॉ. नगेन्द्र ने भारतीय काव्यशास्त्र का पुनराख्यान मनोवैज्ञानिक दृष्टि से किया है। जहाँ उनके सामने मूल चेतना पर आधारित रस के अनेक स्वरूप रहे पर सही मार्ग खोज निकालना सामान्य शास्त्र-चिंतन कार्य नहीं हो सकता। निष्कर्ष रूप में रामदरश मिश्र जो की चंद पंक्तियाँ उद्धृत है- 'रस-सिद्धान्त का लेखक इन भटकावों के बीच सही रास्ता पा लेने में सफल हुआ है और इस सही रास्ते पर वह अडिग विश्वास और अटूट निष्ठा

से चलता रहा है।'

उन्हें रस की मूल चेतना की सार्वभौमिकता तथा चिरन्तनता को प्रतिष्ठित करने के लिए एक ही साथ कई विरोधी दिशाओं से जूझना पड़ा है। 'रस-सिद्धान्त' के अतिरिक्त ध्वनि सिद्धान्त, वक्रोक्ति सिद्धान्त और औचित्य सिद्धान्त की मीमांसा द्वारा काव्य के बाह्य और आन्तरिक सौंदर्य का निरूपण किया। डॉ. सुब्बा लक्ष्मी के अनुसार,'इस क्षेत्र में पदार्पण करके डॉ. नगेन्द्र ने एक प्रमुख कार्य यह किया कि भारतीय साहित्य शास्त्र के अभावों को देखा और अन्य स्त्रोतों से उदारतापूर्वक तत्वों को चुनकर उसको पूर्ण बनाने की चेष्टा की। यह उनका एक रचनात्मक कृतित्त्व है।'

'डॉ. नगेन्द्र जी का एक और ग्रंथ है- 'सौंदर्यशास्त्र की भूमिका' इस ग्रंथ का प्रणयन करके उन्होंने भारतीय समीक्षा शास्त्र के आधुनिक हिन्दी समीक्षा शास्त्र को समृद्ध किया। इस ग्रंथ में उन्होंने स्पष्ट सुबोध शैली में भारतीय सौंदर्यशास्त्र के विकास क्रम का निरूपण करके उसके विविध अंगों का तर्क शुद्ध दृष्टि से विवेचन किया और उसकी स्थापना की।

पाश्चात्य साहित्य शास्त्र के परिदृश्य में डॉ. नगेन्द्र अरस्तू का काव्यशास्त्र, लोंजाइनस और काव्य में उदात्त तत्व। नई समीक्षा; साहित्य का समाज शास्त्र आदि विषयों पर विचार किया है। भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र के समान तत्वों को उन्होंने ठीक से परखा है। इस सम्बन्ध में डॉ. अमरनाथ का कथन विचारणीय है- 'डॉ. नगेन्द्र रस-परिधि के विकास और विस्तार की अनंत संभावनाओं के विश्वासी हैं। वे रस के स्वरूप विकास के साथ-साथ रसात्मक बोध की व्याख्या को भी विकसित करना चाहते हैं। 'रस-सिद्धान्त' में आपने यह दुस्साध्य साधन किया भी है। एक ओर अपने सम्पूर्ण काव्य-समुदायों अलंकार, रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि और औचित्य को रस के संदर्भ में देखा-परखा है तो दूसरी ओर पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सभी प्रमुख वादों-अभिजात्यवाद, स्वछंदतावाद, आदर्शवाद, यथार्थवाद, अभिव्यंजनावाद, प्रभाववाद, प्रतीकवाद आदि को रस-सिद्धान्त के भीतर समेट लिया है।'

'नई समीक्षा' की प्रकृति का बड़ी सूक्ष्मता और संश्लिष्टता के साथ डॉ. नगेन्द्र ने उद्घाटन किया है। जहाँ यह केवल सैद्धान्तिक स्तर पर ही नहीं व्यावहारिक स्तर पर भी किया है। वहीं अंग्रेजी और हिन्दी की कुछ कविताओं को सामने रखकर इनकी गहरी संरचनात्मक व्याख्या की है। भाषा के सम्बन्ध में नगेन्द्र जी की भाषा को एक अभिजात गरिमा से पण्डित देखना चाहते हैं। वे गीतात्मक अनुभूतियों पर अधिक बल देते हैं, इसलिए वे भाषा में कोमल परिष्कृत और ढले रूप वैभव की ओर अधिक झुकाव रखते हैं। नई कविता के विषय में उल्लेख करते है- 'वास्तव में अपने व्यापक अर्थ में रस सौंदर्य का ही पर्याय है। सौंदर्य की कल्पना रस के बिना नहीं हो सकती। सुन्दर और सत्य में भेद वहीं किया जा सकता। नई कविता के भी सौंदर्य का आधार रस है।'

काव्य में अनुभूति के समान अभिव्यक्ति पक्ष पर भी डॉ. नगेन्द्र ने व्यापक प्रकाश डाला है, यथा- 'कविता की अभिव्यंजना के दो मूल तत्व है- बिम्ब और छंद। अमूर्त अनुभूति को मूर्त बनाने में ही इनकी सार्थकता है। अनुभूति मन या हृदय का विषय है। उसे इन्द्रियों का विषय बनाना ही अमूर्त को मूर्त करना है, क्योंकि इंद्रियों के माध्यम से ही श्रोता का पाठक का मन विषय का अनुभव करता है। अत: कवि अपनी अनुभूति जगाने का प्रयत्न करता है। यह प्रयत्न ही कला-साधना है।'

इस प्रकार जहाँ डॉ. नगेन्द्र ने भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका, भारतीय काव्यशास्त्र की परम्परा, रस सिद्धान्त, भारतीय सौंदर्य शास्त्र की भूमिका, मिथकीय साहित्य और साहित्य का समाजशास्त्र जैसे विशिष्ट ग्रंथों के माध्यम से अपनी आलोचनात्मक निपुणता प्रकट की वहीं पाश्चात्य समीक्षा सिद्धान्त और परिदृश्य पर एक सधा हुआ आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया।

'अध्ययन की गंभीर व्यापकता, वैचारिक प्रौढ़ता और अभिव्यद्रि की प्राजंलता ने मिलकर डॉ. नगेन्द्र के समीक्षात्मक अवदान को आकर्षक वैशिष्ट्य प्रदान किया है। आज की हिन्दी समीक्षा के श्रेष्ठम् शिखर डॉ. नगेन्द्र, यह एक मान्य सत्य है।'

आलोचना के क्षेत्र में दीर्घ अवधि तक सक्रिय भूमिका निभाते रहने के बावजूद उन्होंने किसी भी कथाकार या नाटककार की समीक्षा नहीं की। किसी समय उन्होंने जैनेन्द्र के 'त्याग पत्र' और 'सुखदा', सियाराम शरण गुप्त के 'नारी' और अज्ञेय के 'शेखर : एक जीवनी', की समीक्षा उनके प्रभाव की दृष्टि से की थी। उदाहरण के लिए वे इन समीक्षात्मक कृतियों अंत में कहते हैं- 'त्यागपत्र का कौशल अपनी विदग्धता के बल पर अपने मेधावी शिल्प की दुहाई देता है, और 'नारी' का कौशल अपने को छिपाकर अपने स्नेहाद्र शिल्पी की सिफारिश करता है।'

उन्होंने रचना की मूल प्रेरणा, रचनाकार की जीवन दृष्टि, कला, शैली की विदग्धता, इस की क्षणिता आदि के आधार पर उसके प्रभाव का अंकन करते हुये अपना निर्णय दिया है। सन् 1940 में उन्होंने आधुनिक हिन्दी नाटक की रचना की थी। इस रचना में नाटकों में निहित चेतना और रूप बंध की दृष्टि से

उनका वर्गीकरण किया। उसके बाद उन्होंने नाटकों को भी अपनी आलोचना का विषय नहीं बनाया।

'विचार और अनुभूति' नामक कृति के अन्तर्गत गद्य गीतों की तरह लेखक के निबन्धों को छोटे-छोटे अनुच्छेदों में विभक्त कर प्रदीप प्रेस, मुरादाबाद से प्रकाशित किया गया जिसमें इन्होंने काव्यात्मक नाटकीय वातावरण की सृष्टि करके सरल ढंग से गंभीर से गंभीर मत की अभिव्यक्ति है। जीवन के द्वार पर, साहित्य की प्रेरणा, हिन्दी उपन्यास, वाणी के न्याय मंदिर आदि इसी प्रकार के निबन्ध हैं। इन निबन्धों में विचारशृंखला का अभाव दृष्टिगोचर होता है।

निष्कर्ष

डॉ. नगेन्द्र के व्यावहारिक और सैद्धान्तिक आलोचनात्मक अवदान पर दृष्टिपात करने के उपरान्त यह स्पष्ट हो जाता है। कि उनकी वृत्ति मूल रूप से सैद्धान्तिक विवेचन में अधिक रहती थी। जहाँ उनकी आरम्भिक व्यावहारिक आलोचनाओं में भी सैद्धान्तिकता के प्रति रूझान और आग्रह स्पष्ट दिखायी देता है वहीं 'रस-सिद्धान्त' ग्रंथ में केवल रस-सिद्धान्त की मीमांसा ही नहीं है बल्कि प्रकारान्तर से पूरे काव्यशास्त्र की विवेचना है। काव्यशास्त्र का गहरा अध्ययन-मनन लेखक के समर्थ चिन्तन और निर्मल काव्य सृष्टि से और भी समर्थ, एक समग्र बन गया है।

स्थान-स्थान पर मौलिक स्थापनाएँ प्रकट करते हुये डॉ. नगेन्द्र ने आचार्यों के मतों के साथ सहमति-असहमति भी व्यद्र की है। सैद्धान्तिक समीक्षा के क्षेत्र में इस दृष्टि से उनका उच्च स्थान है। डॉ. नगेन्द्र ने आलोचना के लिए चुनाव उन्हीं विषयों का किया है, जिनमें उनकी गहरी रूचि रहती थी। वे स्वयं स्वीकारते हैं कि- 'प्रायः प्रतिष्ठित या ऐसा काव्य है, जिसके स्थायी मूल्य स्पष्ट लक्षित हो, मेरी आलोचना का विषय रहा है- किसी कृति या कृतिकार को स्थापित करने की स्पृहा मेरे मन में नहीं आयी।' उनके आलोचनाओं में खण्डन-मण्डन की चुनौतियों की अपेक्षा व्याख्या विश्लेषण और अनुशासनात्मक दृष्टि ही अधिक मिलती है। विभिन्न साहित्य मर्मन्तों, समीक्षकों, एवं विद्वानों ने डॉ. नगेन्द्र के हिन्दी आलोचनात्मक अवदान को निर्दिष्ट करते हुये अपनी सम्मतियाँ कुछ इस प्रकार से व्यक्त की हैं- 'डॉ. नगेन्द्र की व्यावहारिक आलोचनाएँ भी उनकी विशिष्ट देन है- 'सुमित्रानन्दन पंत, साकेत, एक अध्ययन, आधुनिक हिन्दी नाटक, विचार और विश्लेषण आदि सभी ग्रंथों में उनका मौलिक चिंतन समाहित है, जो उनकी व्यक्तिगत विशिष्टता मानी जायेगी।'

योगेन्द्र प्रताप सिंह के शब्दों में- 'डॉ. नगेन्द्र की व्यावहारिक समीक्षा में उनकी शास्त्रीय प्रमुख रूप से उभरकर सामने आती है। किन्तु यह शास्त्र दृष्टि से हमें पंत की समीक्षा में नहीं दिखायी पड़ती।... यहाँ शुक्ल द्वारा छायावादी काव्य को खण्डित विसंगतियों की उपेक्षा करके उन्होंने इसी काल से जुड़े उन सार्थक मूल्यों के प्रकाश में उसकी व्यावहारिक समीक्षा प्रस्तुत की है।'

अन्यत्र भी दृष्टव्य करने पर, 'डॉ. नगेन्द्र का अपना आलोचना संसार बड़ा ही मूर्त ठोस और सन्तुलित है। इसमें विचारों की व्याख्याओं और निष्कर्षों की ऐसी संगति है जो उनके संसार को स्पृहणीय बनाती है।'

इसी प्रकार, डॉ. नगेन्द्र की आलोचनात्मक सैद्धान्तिक कृतियों का अवलोकन करने के उपरान्त कृष्णदत्त पालीवाल जी स्वीकार करते है- 'भारतीय और पाश्चात्य काव्यशास्त्र में तुलनात्मक अध्ययन से निकाले गए निष्कर्ष सूक्ष्म-गहन चिंतन के परिणाम है। हिन्दी के मौलिक आलोचना शास्त्र में आचार्य शुक्ल के बाद डॉ. नगेन्द्र का नाम अग्रगण्य है।'

अन्ततः इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि डॉ. नगेन्द्र का आलोचनात्मक अवदान व्यवस्थित है; सृजनात्मक है। हिन्दी आलोचना को भारतीयता के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने की दृष्टि से उनकी यह देन महत्वपूर्ण है।

संदर्भ :

1. सुमित्रनन्दन पंत- डॉ. रामकुमार वर्मा (भूमिका), पृ.सं.- 09
2. हिन्दी समीक्षा : स्वरूप ओर संदर्भ- डॉ. राम दरश मिश्र, पृ.सं.- 208
3. सुमित्रनन्दन पंत- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 45
4. वही पृ.सं.- 01, 02
5. अर्धाकथा- डॉ. नगेन्द्र, पृं.सं.- 148
6. डॉ. नगेन्द्र ग्रंथावली-(खण्ड-क)- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 55
7. हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ.सं.- 385
8. अर्धाकथा- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 149
9. अर्धाकथा- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 150
10. हिन्दी आलोचना- डॉ. विश्वनाथ त्रिाठी, पृ.सं.- 158
11. आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य-प्रवृत्तियाँ- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 99
12. आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 104, 105, 107
13. डॉ. नगेन्द्र ग्रन्थावली (खण्ड-9)- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 17
14. साकेत : एक अधययन- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 18
15. साकेत : एक अधययन- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 172, 174
16. अर्धकथा- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 153
17. हिन्दी समीक्षा : स्वरूप और संदर्भ- रामदरश मिश्र, पृ.सं.- 221
18. हिन्दी आलोचना : इतिहास और सिद्धान्त- योगेन्द्र प्रताप सिंह, पृ.सं.- 168
19. डॉ. नगेन्द्र ग्रंथावली (खण्ड-8)- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 70
20. भारतीय साहित्य के निर्माता : डॉ. नगेन्द्र- निर्मला जैन, पृ.सं.- 36, 37
21. हिन्दी आलोचना : इतिहास और सिद्धान्त- योगेन्द्र प्रताप सिंह, पृ.सं.- 169

22. हिन्दी आलोचना की बीसवीं सदी- डॉ. निर्मला जैन, पृ.सं.- 75
23. हिन्दी आलोचना का विकास- डॉ. नंद किशोर नवल, पृ.सं.- 196
24. कामायनी अध्ययन की समस्याएँ- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 11
25. कामायनी अध्ययन की समस्याएँ- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 16
26. आस्था के चरण- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 51
27. डॉ. नगेन्द्र ग्रंथावली (खण्ड-1)- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 341
28. डॉ. नगेन्द्र ग्रंथावली (खण्ड-1)- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 341
29. हिन्दी समीक्षा : स्वरूप और संदर्भ- रामदरश मिश्र, पृ.सं.- 216
30. डॉ. नगेन्द्र की साहित्य साधाना- डॉ. सुब्बा लक्ष्मी पृ.सं.- 130
31. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और परवर्ती आलोचना- डॉ. अमरनाथ, पृ.सं.- 139
32. हिन्दी समीक्षा : स्वरूप और संदर्भ- रामदरश मिश्र, पृ.सं.- 212
33. डॉ. नगेन्द्र ग्रंथावली (खण्ड-7)- डॉ. नगेन्द्र, पृ.सं.- 92
34. हिन्दी आलोचना के नाभि पुरुष : डॉ. नगेन्द्र- सं. शैल्या माहेश्वरी, पृ.सं.- 247
35. हिन्दी के आलोचक- राचारानी, पृ.सं.- 204
36. हिन्दी आलोचना के नाभि पुरुष : डॉ. नगेन्द्र- सं. शैलजा माहेश्वरी, पृ.सं.- 172
37. हिन्दी आलोचना : इतिहास और सिद्धान्त- योगेन्द्र प्रताप सिंह, पृ.सं.- 165
38. हिन्दी समीक्षा : स्वरूप और संदर्भ- रामदरश मिश्र, पृ.सं.- 222
39. हिन्दी आलोचना का सैद्धान्तिक आधार- कृष्णदत्त पालीवाल, पृ.सं.- 452

◆◆◆

पृष्ठ 41 का शेष **प्राचीन संस्कृत साहित्य में .....**

संदर्भ :

1. ब्राउन, डी. मेकैंजी, 'इंडियन पॉलिटिकल थॉट फ्राम मनु टु गांधी', द व्हाइट अम्ब्रेला-यूनिवर्सिटी ऑव कैलिफोर्निया प्रेस, बर्कले एण्ड लॉस एन्जेल्स (1959), पृ0-53.
2. रंगराजन, एल0एन0, 'द अर्थशास्त्र (इन्ट्रोडक्शन)', पेन्गुइन बुक्स, नई दिल्ली (1987), पृ0-1-2.
3. चट्टोपध्याय, एच0 पी0, सरकार, एस0 के0, (सम्पादकगण) 'ग्लोबल इनसाइक्लोपीडिया ऑव पालिटिकल साइंस', वॉल्यूम 1, ग्लोबल विजन पब्लिशिंग हाउस, (2006), पृ.-779-786.
4. प्रसून, श्रीकांत, 'चाणक्य नीति एवं कौटिल्य अर्थशास्त्र' वी एण्ड एस पब्लिशर्स, नई दिल्ली (2012), पृ.-196.
5. जैन, पुखराज, 'प्रमुख राजनीतिक विचारक', साहित्य भवन आगरा (1991), पृ0- 49-50.
6. अर्थशास्त्र पहला अधिकरण-विनयाधिकारिक.
7. प्रसून, श्रीकांत, 'चाणक्य नीति एवं कौटिल्य अर्थशास्त्र' वी एण्ड एस पब्लिशर्स, नई दिल्ली (2012), पृ0-171-172.
8. अर्थशास्त्र छठा अधिकरण-मण्डल योनि, दूसरा अधिकरण-अध्यक्ष प्रचार.
9. चौधरी, राधा कृष्णन, 'कौटिल्याज पॉलिटिकल आइडियाज एण्ड इंस्टीट्यूशन', वॉल्यूम 73, चौरवम्भा संस्कृत सीरिज प्रकाशन, वाराणसी (1971), ओरिजनल फ्रॉम-द यूनिवर्सिटी ऑव मिशिगन, डिजिटाइज्ड-2 नवम्बर, 2006, पृ0-50 122, 219.
10. अर्थशास्त्र छठा अधिकरण-मण्डल योनि.
11. विकिपीडिया. आर्ग.
12. शर्मा, रामशरण, 'आस्पेक्ट्स ऑव पॉलिटिकल आइडियाज एण्ड इंस्टीट्यूशसन्स इन एनाशियन्ट इंडिया', मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशन, दिल्ली (1991), पृ0-37.
13. सालेटोर, बी0ए0, 'एनाशियन्ट इण्डियन पॉलिटिकल थॉट एण्ड इंस्टीट्यूशन', एशिया पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली (1963), पृ0-319-331.
14. आल्तेकर, ए0एस0, 'स्टेट एण्ड गवर्नमेंट इन एनशियन्ट इण्डिया', मोतीलाल बनारसीदास, बनारस (1949), पृ0- 261.

◆◆◆